



महात्मा गांधी का सार्वभौमिक मानवतावाद

गुरु प्रसाद राठौर

शोधार्थी (राजनीति विज्ञान)

महर्षि स्कूल आफ ह्यूमैनिटीज, महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ

डॉ रितु सिंह मीना

सहायक प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान), महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, नोएडा

DOI : <https://doi.org/10.5281/zenodo.23281978>

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Received: 22-07-2026

Accepted: 21-08-2026

Published: 25-09-2026

Keywords:

महात्मा गांधी, सार्वभौमिक मानवतावाद, सत्य, अहिंसा, सर्वोदय, स्वराज, सामाजिक न्याय, मानव-मर्यादा, सर्वधर्म समभाव, विश्वबंधुत्व।

ABSTRACT

महात्मा गांधी का चिंतन मूलतः मानव-मात्र की गरिमा, स्वतंत्रता, समानता, नैतिकता और अहिंसा पर आधारित था। उनका मानवतावाद किसी विशेष जाति, धर्म, राष्ट्र अथवा समुदाय तक सीमित नहीं था, बल्कि समस्त मानवता के कल्याण को अपना अंतिम लक्ष्य मानता था। गांधी के लिए मनुष्य केवल राजनीतिक या आर्थिक प्राणी नहीं, बल्कि नैतिक चेतना से युक्त व्यक्ति था, जिसके जीवन का उद्देश्य स्वयं के साथ-साथ दूसरों के कल्याण में निहित है। सत्य और अहिंसा उनके सार्वभौमिक मानवतावाद के प्रमुख आधार थे। वे मानते थे कि हिंसा किसी भी प्रकार के स्थायी और न्यायपूर्ण सामाजिक परिवर्तन का आधार नहीं बन सकती, जबकि अहिंसा विरोधी के प्रति भी सम्मान और करुणा बनाए रखते हुए परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त करती है (Gandhi, 1927/1993)। गांधी ने सामाजिक असमानता, अस्पृश्यता, धार्मिक विद्वेष और आर्थिक शोषण का विरोध करते हुए मानव-मर्यादा की स्थापना पर बल दिया। उनका सर्वोदय दर्शन समाज के अंतिम व्यक्ति के कल्याण को विकास की कसौटी मानता है। इसी प्रकार स्वराज को उन्होंने केवल राजनीतिक स्वतंत्रता न मानकर व्यक्ति के आत्मसंयम, नैतिक स्वतंत्रता और सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ा। ट्रस्टीशिप का सिद्धांत आर्थिक संसाधनों के न्यायपूर्ण उपयोग और संपन्न वर्ग के सामाजिक

Disclaimer: The opinions, interpretations, conclusions, recommendations, analyses, and statements expressed in this research article are solely those of the author(s) and do not reflect the views, policies, or positions of the Publisher, Chief Editor, Editors, Editorial Board, Reviewers, or their affiliated institutions. The author(s) are solely responsible for ensuring the originality, authenticity, and integrity of the manuscript and for ensuring that it is free from plagiarism, AI-generated content, copyright infringement, data falsification, and any other form of academic misconduct.

दायित्व को रेखांकित करता है (Gandhi, 1938/1999)। सर्वधर्म समभाव तथा विश्वबंधुत्व की उनकी अवधारणा विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक समुदायों के बीच सह-अस्तित्व एवं पारस्परिक सम्मान की भावना को मजबूत करती है। वर्तमान समय में बढ़ती हिंसा, सामाजिक विभाजन, आर्थिक विषमता और वैश्विक संघर्षों के संदर्भ में गांधी का सार्वभौमिक मानवतावाद शांति, न्याय और सह-अस्तित्व पर आधारित समाज के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रस्तुत करता है।

1. महात्मा गांधी के मानवतावादी चिंतन की दार्शनिक पृष्ठभूमि

महात्मा गांधी का मानवतावादी चिंतन किसी एक दार्शनिक सिद्धांत या राजनीतिक विचारधारा का परिणाम नहीं था, बल्कि भारतीय और पाश्चात्य चिंतन परंपराओं के साथ उनके व्यापक संवाद से विकसित हुआ था। गांधी के लिए मनुष्य का मूल्य उसकी जाति, धर्म, भाषा, आर्थिक स्थिति या सामाजिक प्रतिष्ठा से निर्धारित नहीं होता, बल्कि उसकी नैतिक चेतना और मानवीय गरिमा से निर्धारित होता है। इसी कारण उनके चिंतन में मानव-कल्याण राजनीतिक स्वतंत्रता से कहीं व्यापक अवधारणा बन जाता है। वे ऐसी सामाजिक व्यवस्था की कल्पना करते थे जिसमें व्यक्ति को स्वतंत्रता प्राप्त हो, लेकिन उसकी स्वतंत्रता दूसरों के अधिकारों और हितों के प्रति उत्तरदायित्व से जुड़ी हो। इस दृष्टि से गांधी का मानवतावाद व्यक्ति और समाज के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करता है।

गांधी के विचारों पर भगवद्गीता, उपनिषदों, जैन एवं बौद्ध परंपराओं तथा वैष्णव भक्ति परंपरा का महत्वपूर्ण प्रभाव था। इसके साथ ही लियो टॉल्स्टॉय, जॉन रस्किन और हेनरी डेविड थोरो जैसे विचारकों की रचनाओं ने भी उनके सामाजिक और नैतिक चिंतन को प्रभावित किया। रस्किन की *Unto This Last* से गांधी ने श्रम की प्रतिष्ठा, आर्थिक समानता और सभी व्यक्तियों के जीवन-मूल्य की समानता के विचार को ग्रहण किया। टॉल्स्टॉय के विचारों से उन्हें प्रेम, नैतिक प्रतिरोध और अहिंसक जीवन-पद्धति की प्रेरणा मिली। हालांकि गांधी ने इन विचारों को ज्यों का त्यों स्वीकार नहीं किया, बल्कि उन्हें भारतीय सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप पुनर्व्याख्यायित किया (Gandhi, 1927/1993)।

गांधी के मानवतावाद की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वह केवल बौद्धिक विचार नहीं, बल्कि आचरण से जुड़ी हुई जीवन-दृष्टि है। वे मानते थे कि किसी विचार की वास्तविकता तभी सिद्ध होती है जब वह व्यक्ति के व्यवहार और सामाजिक जीवन में दिखाई दे। उनके लिए सत्य केवल कथन की शुद्धता नहीं था, बल्कि जीवन का नैतिक आधार था। इसी प्रकार अहिंसा केवल हिंसा से बचने का नकारात्मक सिद्धांत नहीं, बल्कि दूसरे व्यक्ति के प्रति प्रेम, करुणा और सम्मान की सकारात्मक भावना थी। गांधी का प्रसिद्ध विचार "सत्य ही ईश्वर है" उनके मानवतावादी दर्शन को

आध्यात्मिक आधार प्रदान करता है। उनके लिए सत्य की खोज व्यक्तिगत साधना होने के साथ-साथ सामाजिक उत्तरदायित्व भी थी।

गांधी के चिंतन में साधन और साध्य का संबंध भी मानवतावाद की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। वे मानते थे कि अच्छे उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अमानवीय साधनों का प्रयोग उचित नहीं हो सकता। यदि स्वतंत्रता हिंसा, घृणा और दमन के माध्यम से प्राप्त की जाती है, तो उससे निर्मित व्यवस्था भी अंततः हिंसात्मक प्रवृत्तियों को जन्म दे सकती है। इसलिए उन्होंने साधनों की पवित्रता पर उतना ही बल दिया जितना लक्ष्य की महत्ता पर। उनका यह दृष्टिकोण राजनीति को नैतिकता से जोड़ता है और मनुष्य को राजनीतिक प्रक्रिया के केंद्र में स्थापित करता है।

गांधी के मानवतावाद में व्यक्ति की आत्मनिर्भरता और आत्मानुशासन को भी विशेष महत्व प्राप्त है। वे बाहरी शासन से मुक्ति को पर्याप्त नहीं मानते थे। उनके लिए वास्तविक स्वराज व्यक्ति की ऐसी आंतरिक स्वतंत्रता थी जिसमें वह अपने लोभ, भय, हिंसा और स्वार्थ पर नियंत्रण रख सके। इस प्रकार गांधी का मानवतावाद मनुष्य को अधिकारों का उपभोक्ता मात्र न मानकर नैतिक कर्तव्यों से जुड़े उत्तरदायी व्यक्ति के रूप में देखता है। यही विशेषता उनके मानवतावादी चिंतन को व्यापक और सार्वभौमिक स्वरूप प्रदान करती है।

2. सत्य और अहिंसा : गांधी के मानवतावाद का आधार

गांधी के सार्वभौमिक मानवतावाद को समझने के लिए सत्य और अहिंसा की उनकी अवधारणाओं को समझना आवश्यक है। गांधी के लिए सत्य जीवन का सर्वोच्च नैतिक मूल्य था। वे सत्य को केवल तथ्यात्मक सत्य तक सीमित नहीं करते थे, बल्कि उसे अस्तित्व और नैतिकता से जोड़ते थे। सत्य की खोज उनके जीवन का केंद्रीय उद्देश्य थी। इसी कारण उन्होंने अपने राजनीतिक और सामाजिक संघर्षों को भी सत्य की खोज का माध्यम माना। उनका विश्वास था कि मनुष्य सत्य का पूर्ण स्वामी नहीं हो सकता; वह सत्य की खोज करने वाला साधक है। इस दृष्टिकोण में विनम्रता, सहिष्णुता और दूसरे के विचारों के प्रति सम्मान की भावना निहित है (Gandhi, 1927/1993)।

अहिंसा गांधी के मानवतावाद का व्यावहारिक पक्ष थी। सामान्य अर्थ में अहिंसा को केवल शारीरिक हिंसा से बचने के रूप में समझा जाता है, लेकिन गांधी की अवधारणा इससे कहीं व्यापक थी। उनके लिए मन, वचन और कर्म से किसी व्यक्ति के प्रति घृणा, अपमान या अन्याय न करना भी अहिंसा का हिस्सा था। वे विरोधी व्यक्ति को नष्ट करने के बजाय उसके विचार या अन्यायपूर्ण व्यवहार में परिवर्तन लाने के पक्षधर थे। इसीलिए उनका सत्याग्रह प्रतिद्वंद्वी के विरुद्ध घृणा का संघर्ष नहीं था, बल्कि अन्याय के विरुद्ध नैतिक प्रतिरोध था।

गांधी के सत्याग्रह में मानवतावाद की स्पष्ट अभिव्यक्ति दिखाई देती है। सत्याग्रही अन्याय का विरोध करता है, लेकिन अन्याय करने वाले व्यक्ति के प्रति भी मानवता का भाव बनाए रखता है। इसका उद्देश्य विरोधी को पराजित

करना नहीं, बल्कि सत्य का बोध कराना है। इस प्रक्रिया में संघर्ष करने वाला व्यक्ति स्वयं भी आत्मसंयम, त्याग और अनुशासन का पालन करता है। गांधी ने इस प्रकार राजनीतिक संघर्ष को नैतिक संघर्ष का स्वरूप दिया। उनके लिए किसी भी सामाजिक परिवर्तन की सफलता केवल सत्ता परिवर्तन में नहीं, बल्कि मनुष्य की चेतना में परिवर्तन में निहित थी।

गांधी का अहिंसात्मक दृष्टिकोण राजनीतिक क्षेत्र तक सीमित नहीं था। वे परिवार, समाज, धर्म, अर्थव्यवस्था और अंतरराष्ट्रीय संबंधों में भी अहिंसा की आवश्यकता स्वीकार करते थे। उनका विश्वास था कि हिंसा से भय पैदा किया जा सकता है, लेकिन स्थायी शांति और विश्वास स्थापित नहीं किया जा सकता। हिंसा का प्रत्युत्तर हिंसा से देने पर संघर्ष की प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है। इसके विपरीत अहिंसा संवाद और सह-अस्तित्व की संभावना को बनाए रखती है। इसी कारण गांधी का अहिंसावाद आज भी संघर्ष समाधान और शांति अध्ययन के संदर्भ में महत्वपूर्ण माना जाता है।

सत्य और अहिंसा के बीच गांधी ने गहरा संबंध स्थापित किया। सत्य लक्ष्य था तो अहिंसा उसकी प्राप्ति का साधन। उनके अनुसार सत्य की खोज हिंसक साधनों से नहीं की जा सकती। यह विचार उनके मानवतावाद को विशिष्ट बनाता है, क्योंकि इसमें मनुष्य को साधन नहीं बल्कि स्वयं एक मूल्य के रूप में देखा जाता है। राजनीतिक संघर्ष में भी विरोधी के जीवन और गरिमा का सम्मान बनाए रखना इसी मान्यता का परिणाम था। गांधी का यह विचार आधुनिक राजनीति में प्रचलित शक्ति-केंद्रित दृष्टिकोण के सामने एक वैकल्पिक नैतिक दृष्टि प्रस्तुत करता है।

आज जब व्यक्तिगत, सामाजिक और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंसा के विभिन्न रूप दिखाई देते हैं, गांधी की सत्य-अहिंसा आधारित दृष्टि की उपयोगिता और बढ़ जाती है। हालांकि समकालीन परिस्थितियों में गांधी के सिद्धांतों का प्रयोग सरल नहीं है, फिर भी संवाद, सहिष्णुता, नैतिक प्रतिरोध और मानवीय सम्मान जैसे मूल्यों की आवश्यकता उनके मानवतावादी चिंतन को प्रासंगिक बनाए रखती है।

3. समानता, सामाजिक न्याय और मानव-मर्यादा

गांधी के सार्वभौमिक मानवतावाद का एक प्रमुख पक्ष सामाजिक समानता और मानव-मर्यादा की स्थापना है। भारतीय समाज में जाति, अस्पृश्यता और सामाजिक भेदभाव जैसी समस्याओं ने लंबे समय तक बड़ी संख्या में लोगों को सम्मानजनक जीवन से वंचित रखा था। गांधी ने अस्पृश्यता को सामाजिक और नैतिक बुराई माना तथा इसके विरुद्ध व्यापक जनजागरण किया। उन्होंने दलित समुदायों को “हरिजन” कहकर उनके सम्मान की ओर ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया। यद्यपि बाद के दलित चिंतन ने इस शब्द और गांधी के दृष्टिकोण की आलोचना भी की, फिर भी अस्पृश्यता के विरुद्ध गांधी का सार्वजनिक संघर्ष भारतीय सामाजिक सुधार आंदोलन का महत्वपूर्ण हिस्सा रहा।

गांधी का मानवतावाद सामाजिक समानता को केवल कानूनी अधिकारों के रूप में नहीं देखता था। वे सामाजिक व्यवहार में परिवर्तन को भी आवश्यक मानते थे। उनके लिए मंदिर, कुएँ, सार्वजनिक स्थान और सामाजिक संस्थाएँ सभी लोगों के लिए समान रूप से उपलब्ध होनी चाहिए थीं। वे मानते थे कि किसी व्यक्ति को जन्म के आधार पर निम्न समझना मानवता का अपमान है। इस दृष्टि से उनका सामाजिक चिंतन व्यक्ति की गरिमा को सामाजिक संरचना के केंद्र में स्थापित करता है।

गांधी ने जाति-व्यवस्था और अस्पृश्यता के संबंध में जो विचार प्रस्तुत किए, उनके भीतर समय के साथ परिवर्तन भी दिखाई देता है। वे अस्पृश्यता के कट्टर विरोधी थे, लेकिन वर्ण और जाति के प्रश्न पर उनकी स्थिति जटिल रही। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने गांधी की इस दृष्टि की गंभीर आलोचना की और जाति-व्यवस्था के पूर्ण उन्मूलन को सामाजिक न्याय की अनिवार्य शर्त माना। इस वैचारिक अंतर को ध्यान में रखते हुए गांधी के मानवतावाद का मूल्यांकन करना अधिक उचित है। इससे यह स्पष्ट होता है कि गांधी का सामाजिक सुधार मुख्यतः नैतिक परिवर्तन और सामाजिक सद्भाव पर आधारित था, जबकि अंबेडकर का दृष्टिकोण संरचनात्मक समानता, अधिकार और सामाजिक पुनर्गठन पर अधिक केंद्रित था।

गांधी ने महिलाओं की स्थिति और उनके सामाजिक योगदान को भी महत्व दिया। स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी को प्रोत्साहित करके उन्होंने सार्वजनिक जीवन में उनकी भूमिका को व्यापक बनाया। उनके लिए स्त्री केवल परिवार की भूमिका तक सीमित नहीं थी, बल्कि वह सामाजिक और राष्ट्रीय परिवर्तन की सक्रिय सहभागी हो सकती थी। हालांकि गांधी के महिला संबंधी विचारों में पारंपरिक नैतिक धारणाओं का प्रभाव भी दिखाई देता है, फिर भी सार्वजनिक आंदोलनों में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा देने का उनका प्रयास भारतीय सामाजिक इतिहास में महत्वपूर्ण रहा।

गांधी का मानवतावाद गरीब और कमजोर व्यक्ति के प्रति विशेष संवेदनशीलता पर आधारित था। वे विकास की कसौटी को समाज के सबसे कमजोर व्यक्ति की स्थिति से जोड़ते थे। उनकी "अंत्योदय" की भावना का मूल यही था कि किसी नीति या व्यवस्था का मूल्यांकन इस आधार पर किया जाए कि उससे समाज के अंतिम व्यक्ति को कितना लाभ मिला। बाद में सर्वोदय की अवधारणा में यह विचार और व्यापक रूप ग्रहण करता है। इस दृष्टि में विकास केवल उत्पादन और संपत्ति की वृद्धि नहीं, बल्कि मानवीय जीवन की गुणवत्ता में सुधार है।

मानव-मर्यादा की यह अवधारणा गांधी को आधुनिक मानवतावादी चिंतन के निकट लाती है। वे व्यक्ति को किसी आर्थिक या राजनीतिक व्यवस्था का मात्र साधन नहीं मानते थे। श्रमिक, किसान, महिला, गरीब और सामाजिक

रूप से वंचित व्यक्ति सभी उनके लिए समान मानवीय सम्मान के अधिकारी थे। इस प्रकार गांधी का सामाजिक मानवतावाद व्यक्ति की गरिमा और सामुदायिक उत्तरदायित्व दोनों को साथ लेकर चलता है।

4. सर्वोदय और अंतिम व्यक्ति के कल्याण की अवधारणा

गांधी के सार्वभौमिक मानवतावाद का सामाजिक विस्तार “सर्वोदय” की अवधारणा में दिखाई देता है। सर्वोदय का सामान्य अर्थ है—सभी का उदय या सभी का कल्याण। गांधी ने इस विचार को ऐसी सामाजिक व्यवस्था के रूप में विकसित किया जिसमें प्रगति का लाभ केवल समाज के शक्तिशाली और संपन्न वर्ग तक सीमित न रहे। उनके लिए वास्तविक विकास वही है जिसमें समाज के सबसे कमजोर व्यक्ति का जीवन भी बेहतर हो। इस दृष्टिकोण के कारण गांधी का मानवतावाद व्यक्ति-केंद्रित होने के साथ-साथ समाज-केंद्रित भी बन जाता है।

सर्वोदय की अवधारणा के विकास में जॉन रस्किन की *Unto This Last* का महत्वपूर्ण प्रभाव था। गांधी ने इस पुस्तक से प्रभावित होकर यह समझ विकसित की कि सभी प्रकार के श्रम का समान सामाजिक मूल्य है और समाज की वास्तविक समृद्धि तभी संभव है जब प्रत्येक व्यक्ति के श्रम और जीवन का सम्मान किया जाए। उन्होंने श्रम की गरिमा को अपने रचनात्मक कार्यक्रमों और आश्रम जीवन में व्यवहार के स्तर पर भी अपनाया। सफाई, कृषि, कताई और अन्य शारीरिक श्रम को उन्होंने सामाजिक प्रतिष्ठा से जोड़ा। इसका उद्देश्य श्रम के आधार पर उत्पन्न सामाजिक विभाजन को चुनौती देना था।

गांधी का सर्वोदय केवल आर्थिक समानता की मांग नहीं करता, बल्कि सामाजिक संबंधों में सहयोग और नैतिक उत्तरदायित्व पर बल देता है। वे प्रतिस्पर्धा को पूर्णतः समाप्त करने की बात नहीं करते थे, लेकिन ऐसी प्रतिस्पर्धा के विरोधी थे जो दूसरों के शोषण पर आधारित हो। उनका आदर्श समाज सहयोग, आत्मनिर्भरता और परस्पर सहायता पर आधारित था। इस कारण ग्राम-समुदाय उनके सामाजिक चिंतन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

अंतिम व्यक्ति के कल्याण की गांधीवादी दृष्टि आधुनिक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा से भी जुड़ती है, लेकिन दोनों पूरी तरह समान नहीं हैं। गांधी राज्य की अत्यधिक केंद्रीकृत शक्ति के प्रति सावधान थे। वे चाहते थे कि समाज अपने स्तर पर भी कमजोर व्यक्तियों की सहायता और कल्याण की जिम्मेदारी स्वीकार करे। उनका ग्राम स्वराज इसी विकेंद्रीकरण की दिशा में एक प्रयास था। ग्राम समुदाय को आत्मनिर्भर, सहभागी और नैतिक आधार पर संगठित करने की उनकी कल्पना में व्यक्ति की सक्रिय भूमिका आवश्यक थी।

सर्वोदय में प्रकृति और मानव के संबंध का प्रश्न भी निहित है। गांधी अनियंत्रित उपभोग और संसाधनों के असीमित दोहन के समर्थक नहीं थे। उनका मानना था कि मनुष्य की आवश्यकताओं और लालसाओं के बीच अंतर किया जाना चाहिए। आधुनिक पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में यह दृष्टिकोण विशेष रूप से महत्वपूर्ण दिखाई देता है।

संसाधनों का न्यायपूर्ण उपयोग, सीमित उपभोग और भविष्य की पीढ़ियों के प्रति जिम्मेदारी मानवतावाद के व्यापक स्वरूप को व्यक्त करते हैं।

इस प्रकार सर्वोदय गांधी के मानवतावाद को व्यावहारिक सामाजिक दर्शन में बदलता है। इसमें समाज की सफलता को केवल आर्थिक उत्पादन या राजनीतिक शक्ति से नहीं, बल्कि इस बात से मापा जाता है कि उसके सबसे कमजोर सदस्य को कितना सम्मान, सुरक्षा और अवसर प्राप्त है। गांधी का यह दृष्टिकोण आज सामाजिक समावेशन, सतत विकास और न्यायपूर्ण विकास की चर्चाओं के साथ संवाद स्थापित करने की क्षमता रखता है।

5. स्वराज, ट्रस्टीशिप और आर्थिक मानवतावाद

गांधी के लिए स्वराज का अर्थ केवल विदेशी शासन से राजनीतिक मुक्ति नहीं था। वे स्वराज को व्यक्ति और समाज की आत्मनिर्भरता, आत्मसंयम तथा नैतिक स्वतंत्रता से जोड़ते थे। Hind Swaraj में उन्होंने आधुनिक सभ्यता और उसकी अनियंत्रित भौतिक आकांक्षाओं की आलोचना करते हुए ऐसी व्यवस्था की आवश्यकता पर बल दिया जिसमें मनुष्य साधनों का स्वामी रहे, साधनों का दास न बने (Gandhi, 1909/2009)। इस दृष्टि से स्वराज उनके मानवतावाद का राजनीतिक और नैतिक दोनों पक्ष प्रस्तुत करता है।

गांधी की स्वराज की अवधारणा में व्यक्ति की स्वतंत्रता और सामाजिक उत्तरदायित्व के बीच संतुलन महत्वपूर्ण है। वे ऐसी स्वतंत्रता के पक्षधर नहीं थे जिसमें व्यक्ति केवल अपने हितों की पूर्ति करे। उनके अनुसार स्वतंत्र व्यक्ति वह है जो अपने आचरण को नियंत्रित कर सके और अपने अधिकारों के साथ कर्तव्यों को भी समझे। इसलिए गांधी का स्वराज आत्मशासन से शुरू होकर सामाजिक शासन तक पहुंचता है। इस अवधारणा में लोकतंत्र की वास्तविक शक्ति नागरिकों के नैतिक चरित्र और सहभागिता में निहित मानी जाती है।

आर्थिक क्षेत्र में गांधी ने ट्रस्टीशिप का सिद्धांत प्रस्तुत किया। उनका मानना था कि संपत्ति रखने वाले व्यक्तियों को अपने संसाधनों का उपयोग केवल निजी स्वार्थ के लिए नहीं, बल्कि व्यापक सामाजिक हित में करना चाहिए। संपन्न व्यक्ति संपत्ति का पूर्ण स्वामी न होकर समाज की ओर से उसका ट्रस्टी है—यह विचार आर्थिक असमानता को नैतिक आधार पर संबोधित करने का प्रयास था। गांधी हिंसात्मक वर्ग-संघर्ष के स्थान पर संपत्ति और सामाजिक दायित्व के बीच नैतिक संतुलन स्थापित करना चाहते थे (Gandhi, 1938/1999)।

ट्रस्टीशिप का सिद्धांत पूंजी और श्रम के बीच संघर्ष को कम करने की गांधीवादी कोशिश को व्यक्त करता है। उनका विश्वास था कि संपन्न वर्ग को स्वेच्छा से अपने संसाधनों का उपयोग समाज के हित में करना चाहिए और श्रमिकों को भी सम्मान तथा न्यायपूर्ण परिस्थितियाँ प्राप्त होनी चाहिए। इस दृष्टिकोण की आलोचना इस आधार पर की गई कि

केवल नैतिक अपील के माध्यम से आर्थिक असमानता को समाप्त करना कठिन है। फिर भी इसमें आर्थिक व्यवस्था को मानवीय मूल्यों से जोड़ने का महत्वपूर्ण प्रयास दिखाई देता है।

गांधी का आर्थिक मानवतावाद उत्पादन की मात्रा से अधिक उत्पादन की प्रकृति और उसके सामाजिक परिणामों पर ध्यान देता है। वे ऐसी तकनीक और औद्योगीकरण से सावधान थे जो बड़ी संख्या में लोगों को बेरोजगार कर दे या मनुष्य को मशीन और बाजार का मात्र साधन बना दे। उनका ग्रामोद्योग और कुटीर उद्योग पर बल इसी संदर्भ में समझा जाना चाहिए। वे स्थानीय उत्पादन, श्रम की प्रतिष्ठा और विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था के समर्थक थे। इसका उद्देश्य ग्रामीण समाज को आर्थिक रूप से सक्षम बनाना और रोजगार के अवसरों को व्यापक बनाना था।

समकालीन आर्थिक व्यवस्था गांधी के समय से काफी बदल चुकी है, इसलिए उनके आर्थिक विचारों को उसी रूप में लागू करना संभव नहीं है। फिर भी आर्थिक विकास के साथ असमानता, बेरोजगारी, उपभोक्तावाद और संसाधनों के असमान वितरण जैसी समस्याएँ आज भी मौजूद हैं। ऐसे में ट्रस्टीशिप, सीमित उपभोग, श्रम की प्रतिष्ठा और सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे गांधीवादी विचार आर्थिक मानवतावाद के वैकल्पिक आधार प्रस्तुत करते हैं।

6. सर्वधर्म समभाव और विश्वबंधुत्व

गांधी का सार्वभौमिक मानवतावाद धार्मिक विविधता के प्रति सम्मान के बिना पूर्ण नहीं माना जा सकता। वे स्वयं धार्मिक व्यक्ति थे, लेकिन किसी एक धर्म को मानवता के लिए एकमात्र सत्य मानने के पक्ष में नहीं थे। उनका विश्वास था कि विभिन्न धर्म मनुष्य को नैतिक जीवन की ओर ले जाने वाले अलग-अलग मार्ग हो सकते हैं। इस कारण उन्होंने “सर्वधर्म समभाव” की भावना को महत्व दिया। इसका आशय सभी धर्मों को समान मानना मात्र नहीं, बल्कि उनके अनुयायियों के प्रति सम्मान, सहिष्णुता और संवाद की भावना विकसित करना था।

गांधी के धार्मिक चिंतन में सत्य और नैतिकता को धार्मिक पहचान से ऊपर स्थान प्राप्त था। वे धार्मिक विश्वास को व्यक्तिगत आत्मानुशासन और नैतिक आचरण से जोड़ते थे। उनके लिए धर्म का वास्तविक मूल्य इस बात में था कि वह मनुष्य को अधिक सत्यनिष्ठ, करुणाशील और अहिंसक बनाता है या नहीं। इस दृष्टिकोण ने उनके मानवतावाद को संकीर्ण धार्मिक पहचान से मुक्त रखा। वे धार्मिक स्वतंत्रता के साथ-साथ धार्मिक जिम्मेदारी पर भी बल देते थे।

भारत जैसे बहुधार्मिक समाज में गांधी का यह विचार विशेष महत्व रखता था। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान उन्होंने हिंदू-मुस्लिम एकता और सामुदायिक सद्भाव को राष्ट्रीय जीवन की आवश्यकता माना। वे सांप्रदायिक हिंसा को केवल राजनीतिक समस्या नहीं, बल्कि मानवता के विरुद्ध संकट मानते थे। विभाजन के समय उनकी शांति यात्राएँ और हिंसा को रोकने के प्रयास इस मान्यता के प्रत्यक्ष उदाहरण थे। उनका दृष्टिकोण यह था कि किसी समुदाय की सुरक्षा दूसरे समुदाय की असुरक्षा पर आधारित नहीं हो सकती।

गांधी का मानवतावाद राष्ट्रीय सीमाओं से भी आगे जाता है। वे राष्ट्रवाद को मानवता के विरोध में खड़ा नहीं करना चाहते थे। उनके लिए भारत की स्वतंत्रता का उद्देश्य किसी दूसरे राष्ट्र के प्रति घृणा पैदा करना नहीं था। वे ऐसे राष्ट्रवाद के समर्थक थे जो अपने देश के प्रति जिम्मेदारी निभाते हुए दूसरे राष्ट्रों के अधिकारों और सम्मान को भी स्वीकार करें। इस प्रकार उनका राष्ट्रवाद विश्वबंधुत्व से जुड़ा हुआ था।

विश्वबंधुत्व की गांधीवादी अवधारणा में अहिंसा का केंद्रीय स्थान है। यदि सभी मनुष्यों को समान गरिमा का अधिकारी माना जाए, तो युद्ध, शोषण और दमन को नैतिक आधार नहीं दिया जा सकता। अंतरराष्ट्रीय संबंधों में शक्ति के स्थान पर संवाद, सहयोग और पारस्परिक सम्मान को महत्व देना इसी विचार का परिणाम है। गांधी की यह दृष्टि आज के वैश्विक संदर्भ में विशेष रूप से प्रासंगिक है, जहाँ राष्ट्रों के बीच संघर्ष के साथ-साथ सांस्कृतिक और धार्मिक तनाव भी दिखाई देते हैं।

गांधी का सार्वभौमिक मानवतावाद इस प्रकार धार्मिक सहिष्णुता से आगे बढ़कर मानव एकता का विचार प्रस्तुत करता है। इसमें व्यक्ति पहले मनुष्य है और उसके बाद उसकी अन्य सामाजिक या धार्मिक पहचानें आती हैं। यह दृष्टिकोण विविधता को समाप्त करने की बात नहीं करता, बल्कि विविधताओं के बीच सह-अस्तित्व की संस्कृति विकसित करने पर बल देता है। वर्तमान बहुसांस्कृतिक समाज में सामाजिक संवाद, धार्मिक सहिष्णुता और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए यह विचार महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रदान करता है।

7. समकालीन संदर्भ में गांधी का सार्वभौमिक मानवतावाद एवं निष्कर्ष

समकालीन विश्व में विज्ञान, तकनीक और संचार के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई है, लेकिन इसके साथ हिंसा, सामाजिक विभाजन, आर्थिक असमानता, धार्मिक तनाव, युद्ध और पर्यावरणीय संकट जैसी समस्याएँ भी बनी हुई हैं। ऐसी परिस्थितियों में गांधी का सार्वभौमिक मानवतावाद मानव जीवन के नैतिक पक्ष पर पुनर्विचार की आवश्यकता सामने रखता है। गांधी का महत्व इस बात में नहीं है कि उनके प्रत्येक विचार को वर्तमान परिस्थितियों में उसी रूप में लागू किया जाए, बल्कि इस बात में है कि उनके विचार आधुनिक समस्याओं के समाधान के लिए वैकल्पिक नैतिक दृष्टि उपलब्ध कराते हैं।

आज सामाजिक और राजनीतिक जीवन में असहमति तेजी से संघर्ष का रूप लेती दिखाई देती है। ऐसे समय में गांधी का सत्याग्रह और अहिंसा संवाद तथा शांतिपूर्ण प्रतिरोध की संभावना को बनाए रखते हैं। लोकतांत्रिक समाज में विरोध आवश्यक है, लेकिन विरोध का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिसमें प्रतिद्वंद्वी की मानव-मर्यादा समाप्त न हो। गांधी का यह विचार लोकतांत्रिक असहमति को नैतिक आधार प्रदान करता है। इसी प्रकार धार्मिक और सांस्कृतिक विविधता वाले समाज में सर्वधर्म समभाव सामाजिक सद्भाव के लिए महत्वपूर्ण मूल्य बन सकता है।

आर्थिक क्षेत्र में बढ़ती विषमता गांधी के ट्रस्टीशिप और सर्वोदय संबंधी विचारों को पुनः विचारणीय बनाती है। आधुनिक अर्थव्यवस्था में संपत्ति और अवसरों का असमान वितरण सामाजिक तनाव को बढ़ा सकता है। गांधी का विचार यह प्रश्न उठाता है कि आर्थिक विकास का अंतिम उद्देश्य क्या होना चाहिए और विकास का लाभ किस तक पहुँचना चाहिए। इस दृष्टि से अंतिम व्यक्ति के कल्याण को विकास की कसौटी मानना समावेशी विकास की अवधारणा से जुड़ता है।

पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में भी गांधी का सीमित उपभोग और संयम का विचार महत्वपूर्ण है। पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधनों का असीमित दोहन मानव जीवन के लिए दीर्घकालिक संकट उत्पन्न कर रहा है। गांधी की जीवन-दृष्टि मनुष्य को प्रकृति का निरंकुश उपभोक्ता मानने के बजाय उसके साथ संतुलित संबंध स्थापित करने की प्रेरणा देती है। इस अर्थ में उनका मानवतावाद केवल मनुष्य-मनुष्य के संबंधों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि मनुष्य और प्रकृति के संबंध को भी नैतिक प्रश्न के रूप में सामने लाता है।

गांधी के सार्वभौमिक मानवतावाद की कुछ सीमाएँ भी स्वीकार की जानी चाहिए। उनके अनेक विचार उनके समय की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों से प्रभावित थे तथा जाति, आधुनिक राज्य, औद्योगीकरण और लैंगिक संबंधों के बारे में उनकी कुछ धारणाएँ आलोचना का विषय रही हैं। विशेष रूप से जाति-व्यवस्था के प्रश्न पर गांधी और डॉ. अंबेडकर के बीच वैचारिक मतभेद यह दिखाते हैं कि सामाजिक न्याय की समस्या को केवल नैतिक सुधार के स्तर पर नहीं समझा जा सकता। संरचनात्मक असमानताओं के उन्मूलन के लिए कानूनी, राजनीतिक और संस्थागत उपाय भी आवश्यक हैं। इसलिए गांधी के मानवतावाद का समकालीन मूल्यांकन आलोचनात्मक और संतुलित दृष्टि से किया जाना चाहिए।

समग्र रूप से देखा जाए तो गांधी का सार्वभौमिक मानवतावाद मनुष्य की गरिमा को सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन का आधार बनाने का प्रयास है। सत्य, अहिंसा, सर्वोदय, स्वराज, ट्रस्टीशिप, सर्वधर्म समभाव और विश्वबंधुत्व उनके चिंतन के अलग-अलग विचार नहीं, बल्कि एक व्यापक मानवीय दृष्टि के परस्पर जुड़े हुए पक्ष हैं। गांधी के लिए सभ्यता की श्रेष्ठता उसकी भौतिक उपलब्धियों में नहीं, बल्कि इस बात में थी कि वह मनुष्य को कितना न्यायपूर्ण, स्वतंत्र, संवेदनशील और नैतिक बनाती है (Gandhi, 1909/2009)।

वर्तमान समय में गांधी के मानवतावाद की प्रासंगिकता किसी राजनीतिक नारे में नहीं, बल्कि हिंसा और विभाजन के स्थान पर संवाद, शोषण के स्थान पर न्याय तथा स्वार्थ के स्थान पर मानवीय उत्तरदायित्व को स्थापित करने की उसकी क्षमता में निहित है। इस दृष्टि से गांधी का सार्वभौमिक मानवतावाद आज भी एक अधिक न्यायपूर्ण, शांतिपूर्ण और सह-अस्तित्वपूर्ण समाज के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रस्तुत करता है।



संदर्भ-सूची

1. Ambedkar, B. R. (1946). What Congress and Gandhi have done to the Untouchables. Thacker & Co.
2. Allen, D. (2007). The philosophy of Mahatma Gandhi for the twenty-first century. Oxford University Press.
3. Arnold, D. (2013). Gandhi and the politics of technology. Cambridge University Press.
4. Brown, J. M. (1972). Gandhi's rise to power: Indian politics 1915–1922. Cambridge University Press.
5. Dalton, D. (1993). Mahatma Gandhi: Nonviolent power in action. Columbia University Press.
6. Gandhi, M. K. (1909/2009). Hind Swaraj or Indian home rule. Cambridge University Press.
7. Gandhi, M. K. (1927/1993). An autobiography: The story of my experiments with truth. Beacon Press.
8. Gandhi, M. K. (1938/1999). Harijan: Selected writings. Navajivan Publishing House.
9. Gandhi, M. K. (1942). Constructive programme: Its meaning and place. Navajivan Publishing House.
10. Gandhi, M. K. (1948). Gandhi on non-violence. New Directions.
11. Gandhi, M. K. (1958). The collected works of Mahatma Gandhi (Vols. 1–100). Publications Division, Government of India.
12. Gopinathan, N. (1997). Gandhi and the philosophy of nonviolence. Sterling Publishers.
13. Guha, R. (2018). Gandhi: The years that changed the world, 1914–1948. Alfred A. Knopf.
14. Iyer, R. N. (1973). The moral and political thought of Mahatma Gandhi. Oxford University Press.
15. Jack, H. (Ed.). (1956). The Gandhi reader: A sourcebook of his life and writings. Grove Press.
16. Kapur, S. (1993). Rethinking Gandhi and nonviolent social change. Cambridge University Press.
17. Parekh, B. (1989). Gandhi's political philosophy: A critical examination. Macmillan.
18. Parel, A. J. (Ed.). (1997). Hind Swaraj and other writings. Cambridge University Press.
19. Parel, A. J. (2006). Gandhi's philosophy and the quest for harmony. Cambridge University Press.
20. Raghavan, V. (2012). Gandhi and the politics of nonviolence. Orient BlackSwan.
21. Rudolph, L. I., & Rudolph, S. H. (2006). Postmodern Gandhi and other essays: Gandhi in the world and at home. University of Chicago Press.
22. Tendulkar, D. G. (1951–1954). Mahatma: Life of Mohandas Karamchand Gandhi (Vols. 1–8). Publications Division, Government of India.
23. Terchek, R. J. (1998). Gandhi: Struggling for autonomy. Rowman & Littlefield.
24. Weber, T. (1996). On the salt march: The historiography of Gandhi's march to Dandi. HarperCollins.
25. Wolpert, S. (2001). Gandhi's passion: The life and legacy of Mahatma Gandhi. Oxford University Press.